eISSN 2581-8996
ONLINE
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 07, Special Issue 01, February 2024

मै कहता हौं आंखिन देखी, तू कहता कागद की लेखी

[1]डॉ चन्दन कुमार
[1]असिस्टेंट प्रोफेसर, हिंदी विभाग, राजकीय महाविघालय,बाराखाल संतकबीरनगर

Received: 17 Dec 2023, Accepted: 15 January 2024, Published online: 01 February 2024

Abstract

आज जब धर्म आधारित चुनावी राजनीति में सांप्रदायिकता की आंधी चल रही है, धर्म का नाम लेकर हिंदू– मुसलमानों में घृणा, द्वेष और उन्माद का घोर प्रचार प्रसार किया जा रहा है।। आए दिन दलितो, स्त्रीयों, आदिवासियों, विकलांगो के साथ भेदभाव और दोयम दर्जे का व्यवहार जारी है। पाखण्ड, अन्धविश्वास, मूर्तिपूजा, मंदिर, मस्जिद, बाहयाडंबरों के जाल में नेता, मोलवी, बाबा जनता को फंसाये रखने के यत्न कर रहे हैं ऐसे अंधेरे कठिन और संकट के दौर में कबीर अपनी बानियों से हमें प्रकाश की राह दिखाते हैं। कबीर ने विभिन्न धर्मों, संप्रदायों, जातियों, वर्णों को नकार कर ऐसे समाज की स्थापना का प्रयास किया जिसमें धर्म संप्रदाय, ऊँच–नीच के भेद्भाव के लिए कोई स्थान नहीं है। उनके समाज में न कोई हिंदू है, न कोई मुसलमान – सब मनुष्य है, कोई किसी से छोटा बड़ा नहीं है। पीड़ित, शोषित, अपमानित जन और समाज के दुखों से कबीर का गहरा सरोकार है। कबीर वेद – पुराण, कुरान जैसे शास्त्र और शास्त्रीय ज्ञान को नहीं मानते ऐसा ज्ञान जो आत्म ज्ञान, अनुभव जन्य ज्ञान को कुंठित करता हो।

बाहयाचारों, बाह्याडंबरो, पाखण्डों और ढकोसलों पर व्यंग्यपरक चकनाचूर करने वाली भाषा अन्य कवियों, संतो, योगियों से कहीं अधिक कबीर की बानियों में धार पाती है। कबीर की व्यंगात्मक सरल अर्थपूर्ण भाषा भी उन्हें और उनकी कविताई को लोकप्रिय, देशज, सार्थक, साहित्यिक और आधुनिक बनाती है। अनुभूति की सच्चाई और अभिव्यक्ति की ईमानदारी कबीर की सबसे बड़ी विशेषता है। वे जो कुछ कहते थे अनुभव के आधार पर कहते थे, इसीलिए उनकी उक्तियाँ बेधनेवाली और व्यंग्य चोट करने वाले होते थे। कबीर अपने युग को देखनेवाले कालजीवी कवि हैं और इसीलिए कालजयी भी है। उनकी कविताओं में अभिव्यक्त चिंताएँ और चिंतन आज भी जारी है। आधुनिक भारतीय साहित्य में कबीर तत्व अनेक रूपों में विद्यमान है। उनकी बानियों की संगीतमय प्रस्तुति जागरण गीतों की तरह जन–मन में बसी हुई है। उनकी कविताएँ युगीन विसंगतियों , विद्रूपताओ , विकृतियों को पहचानने की आधुनिक साहित्यकारों को जीवन दृष्टि देती है।

बीजशब्द– भूमंडलीकरण, पुरोहितवाद, कठमुल्लापन, सामंतवाद, वर्गवाद, वर्ण व्यवस्था, कालजीवी।

Introduction

आज भूमंडलीकरण के दौर में जब भारत ग्लोवल गाँव में कदम बढ़ा चुका है। ऐसे वक्त में भी चुनाव आधारित लोकतंत्र में जातिआधारित जनगड़ना करवाने की पार्टियों के घोषणापत्र से इतर रैलियों के मंचों से सत्ता हासिल करने के लिए नेताओं को धर्म एवं जाति के घोड़े पर सवार होना पड़ रहा है। आज जब धर्म आधारित चुनावी राजनीति में सांप्रदायिकता की आंधी चल रही है, धर्म

eISSN 2581-8996
ONLINE
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 07, Special Issue 01, February 2024

का नाम लेकर हिंदू– मुसलमानों में घृणा, द्वेष और उन्माद का घोर प्रचार प्रसार किया जा रहा है। जाति का विषवृक्ष समाज में ऑक्सीजन की जगह जहर फैला रहा है। जाति के नाम पर कट्टरताएं, संकीर्णताएं एवं दुराग्रह बढ़ते जा रहे हैं। आए दिन दलितो, स्त्रीयों, आदिवासियों,विकलांगो के साथ भेदभाव और दोयम दर्जे का व्यवहार जारी है। पाखण्ड, अन्धविश्वास, मूर्तिपूजा, मंदिर, मस्जिद, बाहयाडंबरों के जाल में नेता, मोलवी, बाबा जनता को फंसाये रखने के यत्न कर रहे हैं ऐसे अंधेरे कठिन और संकट के दौर में कबीर अपनी बानियों से हमें प्रकाश की राह दिखाते हैं। ऐसे कठिन समय में कबीर को याद करना स्वाभाविक और जरूरी हो गया है।

भक्तिकालीन भारतीय समाज में जब कबीर पैदा हुए थे तब एक ओर पौराणिक शास्त्रीय धर्म आधारित जाति और वर्ण व्यवस्था थी जिसका विरोध करते हुए बौद्ध, जैन, शाक्त, सिद्ध, नाथ धर्म सामने आ रहे थे दूसरी ओर सामाजिक विषमता, कट्टरता उग्रता पर आधारित इस्लाम था। हिन्दू और मुसलमान दोनों धार्मिक कर्मकाण्ड की चक्की में पीस रहे थे। राजसत्ता के शोषण चक्र से हिन्दू मुसलमान सभी पीडीत थे। कबीर जनता को इस चक्की में पीसता देख कहते हैं–

चलती चक्की देखकर, दिया कबीरा रोये।
दो पाटन के बीच में , साबुत बचा ना कोय।

हिंदू और इस्लाम की रूढ़ियों, कट्टरताओं और संकीर्णताओं को देखते हुए उस काल में कबीर जैसे व्यक्तित्व की जरूरत थी जो सच बोलने का साहस रखता हो लोकधर्म के भ्रमजाल में फंसी जनता को निर्भय होकर 'मानुष सत्य' की राह पर चलने की प्रेरणा देता हो।
साँच ही कहत और साँच ही गहत है.

काँच कूं त्यागकर साँच लगा।
कहैं कबीर यूँ भक्त निर्भय हुआ।
जन्म और मरन का भ्रम भागा।

प्रो0 मैनेजर पाण्डेय ने कहा है– कबीर जिस साँच को कहने और गहने की घोषणा करते हैं, वह मूलतः मानुष सत्य है। वही मानुष सत्य सम्पूर्ण भक्ति आन्दोलन का केन्द्रीय सत्य है। कबीर को यह सत्य किसी ग्रन्थ– वेद या कुरान से नहीं मिला था। वह उन्हें अपने समय और समाज के मानव जीवन के अनुभव से मिला था , इसीलिए उसे वे श अनमैं साँचा श कहते हैं। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के अनुसार श्अनमैं साँचा का अर्थ है– अनुभव का सत्य और अनभय सत्यभी जीवन के विभिन्न प्रसंगों में सत्य का अनुभव तो बहुत लोगों को होता है लेकिन कभी शास्त्र के भय से और कभी लोक के डर से उसे कहने का साहस सबमे नहीं होता। बिरला ही कोई निर्भय होकर अपने अनुभव का सत्य सबसे कहता है। वहीं कबीर होता है कल, आज और कल भी ।(1)

कबीर वेद – पुराण , कुरान जैसे शास्त्र और शास्त्रीय ज्ञान को नहीं मानते ऐसा ज्ञान जो आत्म ज्ञान , अनुभव जन्य ज्ञान को कुंठित करता हो। उन्हें कोई भी पाखंड, बाह्याचार, साधना स्वीकार्य नहीं जो बुद्धि–विरुद्ध हो, ऐसा कोई धर्म, जाति, वर्ण, मत, विचार स्वीकार्य नहीं जो मनुष्य–मनुष्य के बीच भेद भाव पैदा करता हो। वेद, कुरान भ्रम पैदा करते हैं। तीर्थ , रोजा, नमाज,

eISSN 2581-8996
ONLINE
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 07, Special Issue 01, February 2024

पूजा, व्रत गुमराह करते हैं। पंडित – पांडे, काजी – मुल्ला उन धर्मो के ठेकेदार, दलाल हैं जो धर्म नहीं है। कबीर क्रांतिकारी समाज–सुधारक हैं। धर्म–सुधारक है। वे एक ऐसा समाज चाहते हैं जहां न कोई हिन्दू हो न मुसलमान, न पूजा हो न नमाज, न पंडित हों न मुल्ला सिर्फ इंसान और उसकी इन्सानियत हो। वे अपने अनुभवसत्य को शास्त्रों के सत्य से अलग करते हुए कहते हैं–

मेरा तेरा मनुवा कैसे एक होय रे ,
मैं कहता हूं आखिन देखी , तू कहता कागद की लेखी ।
मैं कहता सुरझावन हारी , तू राखा उरझोय रे ।
मैं कहता तू जागत रहना , तू रहता है सोय रे ।
मैं कहता निरमोही रहियो , तू जाता है मोय रे ।

भक्तिकाल में मनुष्यता की पहचान बन चुके धर्म, जाति, वर्ण व्यवस्था आधारित ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शुद्र के भेदभाव पर तीखा और कड़ा प्रहार करते हुए सवालों की झड़ी लगा देते हैं–

ऊँचे कुल का जनमिया करनी ऊँच न होय !
सुबरन कलस सुराभरा साधू निन्दत सोय ।
• ••
हमारे कैसे लोहू तुम्हारे कैसे दूद।
तुम कैसे बामन पाण्डे हम कैसे सूद।।
• ••
जो तू बाभन बंभनी जाया, आन बाट हवै क्यों नहिं आया ।
• ••
जाति पाति पूछे नहीं कोई , हरि को भजे सो हरि का होई ।

कबीर ने विभिन्न धर्मों, संप्रदायों, जातियों, वर्णों को नकार कर ऐसे समाज की स्थापना का प्रयास किया जिसमें धर्म संप्रदाय, ऊँच–नीच के भेद्भाव के लिए कोई स्थान नहीं है। उनके समाज में न कोई हिंदू है, न कोई मुसलमान – सब मनुष्य है, कोई किसी से छोटा बड़ा नहीं है। पीड़ित, शोषित, अपमानित जन और समाज के दुखों से कबीर का गहरा सरोकार है। कबीर सामंती शोषण के चक्र में फंसी हुई जनता के दुखों से गहरे स्तर तक जुड़े थे। कबीरदास के अनुसार तत्कालीन भारतीय समाज की व्यवस्था ऐसी थी जिसमें –

एकनिदीना पाट पटंबर , एकनि सेज निवारा
एकनि दीना गरे गूदरी , उकनि सेज पयारा ।

आज भी एक वर्ग के पास इतनी गरीबी है कि रोटी कपड़ा मकान के लिए तरसते हुए दिन बिताता है जबकि अमीर वर्ग रेशमी वस्त्रों और भोग विलास में डूबा हुआ है।

इक हूंहि दीन एक देहि दान, इक करें कलापी सुरापान ।

eISSN 2581-8996
ONLINE
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 07, Special Issue 01, February 2024

जातिवाद, वर्ण व्यवस्था और धार्मिक संस्थान भारतीय सामंतवाद के मूलाधार है जो आजादी के 77 वर्षों बाद भी जनता को बाँट रहे हैं उसके दुख दर्द को बढ़ा रहे हैं। जाति और धर्म के आधार पर आज भी सत्ता को प्राप्त करने की होड़ नेताओं में लगी हुई है। किसान–मजदूर तब भी पीड़ित थे आज भी पिस रहे हैं। इस सामाजिक आर्थिक विषमता पर कबीर लगातार चोट करते हैं ––

निर्धनआदर कोई न देई। लाख जतन करै ओहु चित्त न धरई ॥
जो निरधन सरधन कै जाई। आगै बैठा पीठ फिराई ।।

कबीर भारतीय सामंती समाज की मूल अवधारणा पर प्रहार करते हैं। डॉ० प्रमोद तिवारी ने श 'भोजपुरियत की थाती श में लिखा है दृ"असल में कबीर वाली भोजपुरिया संस्कृति, काशी के ब्राह्मणवादी, वर्चस्ववादी, संस्कृतवादी, अभिजात्यवादी, सामंती व्यवस्था वाली संस्कृति के समानांतर लोक के बहुजनवादी, सामूहिकतावादी, मेहनतवादी श्रमशीललोगन के प्रतिसंस्कृति हे द्य कबीर के जीवन दर्शन असल में शोषित, पीड़ित बहुसंख्यक समाज में आत्मविश्वास भर देबेवाला श श्रमशक्ति श के सम्मान के दर्शनश हे।(2) इसी पुस्तक में प्रमोद तिवारी भोजपुरियां समाज मेंपैदा हुए गोरख, रैदास, हीरा डोम, प्रेमचंद, धूमिल जैसे कवियों लेखकों की सामंतविरोधी , विद्रोही तेवर की पहचान कराते हैं। कबीर हिन्दू और इस्लाम दोनों धर्मों के धर्मग्रन्थों से निकली सामाजिक व्यवस्थाओं की रूढ़ियों, बाहयाडंबरों की आलोचना भी करते हैं।. शास्त्रीय धर्म के भय और लोकधर्म के भ्रम अक्सर वेद – पुराण , कुरान के सहारे ही पलते फलते फूलते रहे हैं। इस भ्रम जाल के नाम पर फैले लोकाचार के छद्म को कबीर बखूबी पहचानते हैं–

ताथै कहिए लोकाचार , वेद कतेब कथै ब्यौहार ।

वे शास्त्रज्ञान की जगह आत्मज्ञान पर बल दे रहे थे–
आत्मज्ञान बिना जग झूठा क्या मथुरा क्या कासी ।

वे उस पाण्डित्य को भी व्यर्थ समझते हैं जो जनसाधारण को भ्रमित करता है उसे जड़ बनाता है। वे साफ घोषणा करते हैं–
पंडित बाद बदंते झूठा।

शास्त्रसम्मत किताबों से बनी पहचान को नकारते हुए कबीर कहते हैं–

हिन्दू कहो तो मैं नहीं , मुसलमान भी नाहि
पाँच तत्व का पूतला , गैबी खेले माहिं।

मानवीय संवेदना के खिलाफ है धर्मशास्त्र से संचालित व्यवस्था। धर्मशास्त्रों के अनुयायी कट्टरता, घृणा, द्वेष, नफरतों को फैला रहे हैं–

पढ़ि पढ़ि के पत्थर भया , लिखिलिखि भया जुईंट
कहै कबीरा प्रेम की लागीं न एकौ छींट।

eISSN 2581-8996
ONLINE
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 07, Special Issue 01, February 2024

कबीर का यह कथन उस समय के पोथीभक्त पण्डितों और मुल्लाओं के बारे में तीखी प्रतिक्रिया है। मुल्ला और काजी को कबीर किताबधारी, अदना और तत्त्वज्ञानहीन समझते हैं– कुकर्मी, अंधविश्वासी और पतित। कबीर नेव्रत, उपवास, छुआछूत, अवतार उपासना कर्मकांड, वेदपाठ तीर्थस्थान आदि सबके विरोध में कबीर ने कहा है। उनके लिए सारा हिंदू धर्म बाह्याचारों से भरा हुआ ढकोसला भर रह गया है। 'बीजक' में करीब एक दर्जन पद सीधे श पंडित श या श पाडे श को संबोधन करके कहे गए हैं , जैसे

पंडित देखहु मन मंह जानी।
कछु धै छूति कहां ते उपजी, तबहि छूति तुम मानी।
पंडित, सोधि कहहु समुझाई, जाते आवागमन नसाई ।
अरथ – धरम अरु काम – मोच्छ दृ फल , कवन दिसा बस भाई ।। ष
अनजाने को सरग – नरक है , हरि जाने को नाहि ।
जेहि डरते भव लोग डरतु है सो डर हमरे नाहिं ।

कबीर निडरतापूर्वक पंडितों के शास्त्रों के आतंकजाल को तोडते हुए, लोकाचार के जंजाल को ढहाते हुए सहजतापूर्वक सत्य तक पहुंचते हैं अपने पाठको औरश्रोताओं को पहुंचाते है।

कबीर लोकजीवन में बसे ऐसे अंधविश्वासों का भी खंडन करते हैं जो मनुष्यों के आत्मविश्वास का विनाश करते हैं। कबीर अपने समय के अन्धविश्वास का खंडन करते हैं कि काशी में मरने पर मोक्ष मिलता है और मगहर में मरने पर गदहा होता है–

लोका मति के भोरा रे।
जो काशी तन तजै कबीरा , तो रामहिं कौन निहोरा रे ।
कहे कबीर सुनहु रे संतो , भ्रम परै जिनि कोई ।
जस कासी तस मगहर उसर,हिरदै राम सति होई ।

कबीर के यहाँ कथनी करनी की एकरूपता है। उन्होंने सिर्फ कविता में इस अन्धविश्वास का खंडन नहीं किया बल्कि जीवन भर काशी रहकर अंतिम समय में मगहर जाकर प्राण त्यागे। यही कारण है कि वे अपने युग के तो मार्गदर्शक बने ही आज के दौर में भी मानवीय विवेक के प्रतीक और प्रतिमान बने हुए हैं।

हिंसा , रोजा , नमाज , छापा , तिलक , माला , गंगास्नान के विरोध में कबीर प्रश्न करते हुए पथभ्रष्ट मानव सभ्यता को सही राह पर लाने की कोशिश करते हैं

माला फेरत जुग गया , गया न मन का फेर ।

• ••

पाहन पूजै हरि मिलै तो मैं पूजूं पहार !
घर की चाकी कोई न पूजे पीसि खाय संसार ॥

• ••

चली कुलबोरनी गंगा नहाने

• ••

eISSN 2581-8996
ONLINE
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 07, Special Issue 01, February 2024

काँकर–पाथर जोरि कै मसजिद लई चुनाय ।
ता चढ़ि मुल्ला बाँग दे , क्या बहिरा हुआ खुदाय ।
• ••
दिन में रोजा रहत है राति हनत है गाय ।
यह तौ खून वह बंदगी कैसे खुसी खुदाय द्यद्य

कबीर में अस्वीकार का अद्भुत साहस है। पुस्तक श कबीर श में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने लिखा है– "बाहयाचार की निरर्थक पूजा और संस्कारों की विचारहीन गुलामी कबीर को पसंद नहीं थी। वे इनसे मुक्त मनुष्यता को ही प्रेमभक्ति का पात्र मानते थे। वे मनुष्यमात्र को समान मर्यादा का अधिकारी मानते थेयजातिगत , कुलगत , आचारगत श्रेष्ठता का उनकी दृष्टि में कोई मूल्य नहीं था ।"(3) काजी , मुल्ला मौलवी , शेख , पंडे, पुरोहित , पुजारी जैसे शोषक वर्ग के कमाई के साधन बने अनेको पाखण्डों को धिक्कारते हुए कबीर की कविताई आज भी लोकजीवन का कंठहार बनी हुई है।

कबीर के संदर्भ में इन्ही पंडितो और शेखों को द्विवेदी जी 'बाहयाचारों के गटठर , केवल कुसंस्कारों के गुड्डेश कहते हैं। साधारण गृहस्थों पर आक्रमण करते समय कबीर लापरवाह होते हैं। यही लापरवाही कबीर के व्यंग्यों की आत्मा है। द्विवेदी जी लिखते हैं– "सच पूछा जाए तो आजतक हिंदी में ऐसा जबरदस्त व्यंग्यलेखक पैदा ही नहीं हुआ। उनकी साफ चोट करने वाली भाषा , बिना कहे भी कुछ कह देने वाली शैली और अत्यंत सादी किंतु तेज प्रकाशन– भंगी अनन्य साधारण है ।(4) बाहयाचारों, बाह्याडंबरो , पाखण्डों और ढकोसलों पर व्यंग्यपरक चकनाचूर करने वाली भाषा अन्य कवियों , संतो, योगियों से कहीं अधिक कबीर की बानियों में धार पाती है। कबीर की व्यंगात्मक सरल अर्थपूर्ण भाषा भी उन्हें और उनकी कविताई को लोकप्रिय,देशज,सार्थक,साहित्यिक और आधुनिक बनाती है। अनुभूति की सच्चाई और अभिव्यक्ति की ईमानदारी कबीर की सबसे बड़ी विशेषता है। वे जो कुछ कहते थे अनुभव के आधार पर कहते थे, इसीलिए उनकी उक्तियाँ बेधनेवाली और व्यंग्य चोट करने वाले होते थे। भगवान के नाम पर पाखंड करने वालों को उन्होंने कभी छुट नहीं दी दूसरे भोले भाले लोगों को गुमराह करने वाले पाखंडियों को उन्होंने कभी माफ नहीं किया। ऐसे अवसरों पर उनकी भाषा उग्र, कठोर, आक्रामक हो जाती है। पर गुमराह लोगों की गलतीदिखाने में उन्हें एक तरह का रस मिलता था। व्यंग्य करने में उन्हें जैसे तृप्ति मिलती थीं। कबीर के प्रश्न उच्च वर्ग और उच्च वर्ण की नैतिक मान्यताओ को चुनौती देने वाले, उनकी बखिया उधेड़ने वाले हैं, वे मान्यताएँ चाहे कबीर के युग की हो या आज के समाज की हूं। कबीर की प्रश्न पूछने की प्रवृत्ति व्यंग्य को विशिष्ट सामाजिक कला बनाती है। वह आज भी साधारण जनता को सत्ता और धर्म के ठेकेदारों से परेशान करने वाले प्रश्न पूछने की प्रेरणा देती है। कबीर के व्यक्तित्व का विश्लेषण करते हुए द्विवेदी जी लिखते हैं– ऐसे थे कबीर ! सिर से पैर तक, मस्त मौला, स्वभाव से फक्कड़, आदत से अक्खड़य भक्त के सामने निरीह, भेषधारी के आगे प्रचंड य दिल के साफ, दिमाग के दुरुस्त भीतर से कोमल, बाहर से कठोर, जन्म से अस्पृश्य, कर्म से बंदनीय। (5)

eISSN 2581-8996
ONLINE
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 07, Special Issue 01, February 2024

आज भी कबीर के प्रश्नों के चोटों की मार और आलोचनात्मक सवालो से जातिवाद, धर्म और धर्मशास्त्रों के ठेकेदार पंडित और मौलवी समान रूप से दुखी है। कबीर की कविताई ने मध्यकाल से आधुनिक काल तक, सामंती समाज और उसकी जटिल जड़ता को तोड़ने का साहसिक काम किया है। कबीर की कविता की अपार लोकप्रियता का एक कारण उसकी बोलचाल की मातृभाषा है। इस जीवन – व्यवहार की भाषा में कही कविता को हिंदू, मुसलमान, साधु गृहस्थ, अनपढ़ और पढ़े लिखे, पुरूष और स्त्री, देहाती और शहरी सभी समझते हैं।

कबीर अपने युग को देखनेवाले कालजीवी कवि हैं और इसीलिए कालजयी भी है। उनकी कविताओं में अभिव्यक्त चिंताएँ और चिंतन आज भी जारी है। आधुनिक भारतीय साहित्य में कबीर तत्व अनेक रूपों में विद्यमान है। उनकी बानियों की संगीतमय प्रस्तुति जागरण गीतों की तरह जन–मन में बसी हुई है। उनकी कविताएँ युगीन विसंगतियों, विद्रूपताओ, विकृतियों को पहचानने की आधुनिक साहित्यकारों को जीवन दृष्टि देती है। आम जन के दुखों और पीड़ाओं से जुड़ने की ताकत देती है। आज के दौर के ना जाने कितने जटिल सामाजिक सांस्कृतिक प्रश्नों को पहचानने और उसका उत्तर देने का कबीर मार्ग प्रशस्त करते हैं। कबीर के उपदेश और शिक्षाएं आज भी प्रासंगिक हैं। धर्म, समाज की रूढ़ियों आडम्बरो के बंधन से मुक्ति की तलाश , मनुष्य को मनुष्य की तरह जीने का अधिकार जैसे जरूरी मानवाधिकार कबीर को आधुनिक बनाए हुए हैं। जब तक जनता सैकड़ों साल पुरानी 'कागद लेखी' वर्ण, जाति, धर्म से उत्पन्न समस्याओं से घिरी रहेगी कबीर की कविताई 'आंखिन देखी' उन प्रश्नों का उत्तर देते हुए प्रासंगिक बनी रहेगी।

संदर्भ सूची–

1. मैनेजर पांडेय–हिन्दी कविता का अतीत और वर्तमान–, वाणी प्रकाशन, दिल्ली प्रथम संस्करण–2013पृष्ठ–12
2. प्रमोद कुमार तिवारी–भोजपुरियत के थाती, साहित्य विमर्श प्रकाशन,गुरुग्राम संस्करण–2021पृष्ठ–27
3. हजारी प्रसाद द्विवेदी–कबीर , राजकमल प्रकाशन , नयी दिल्ली , अठारहवीं आवृत्ति –2013पृष्ठ–172
4. वही, पृष्ठ–131
5. वही, पृष्ठ–134